16-04-77 ओम शान्ति अव्यक्त बापदादा मधुबन

ब्राह्मण जन्म की दिव्यता और अलौकिकता

मर्यादा पुरूषोत्तम, बाप समान बनने वाले, सदा सिरताज, सदा बाप के सर्व प्राप्तियों के सहारे में रहने वाले बच्चों प्रति उच्चारे हुए बाबा के महावाक्य :-

सुनना और समाना। 'सुनना' सहज लगता है रूचि होती है सुनते ही रहें। यह इच्छा सदैव रहती है। ऐसे ही समाना भी इतना ही सहज अनुभव होता है। सदा इच्छा रहती है कि समाने से बाप समान बनना है। समाने का स्वरूप है बाप समान बनना। तो अभी तक फर्स्ट स्टेज पर हो, सेकेण्ड स्टेज पर हो वा लास्ट स्टेज तक हो? लास्ट स्टेज है सुनना और बनना। सुन रहे हैं, बन ही जायेंगे, बनना ही है। कल्प पहले भी बने थे, अब भी अवश्य बनेंगे, यह बोल लास्ट स्टेज में समाप्त हो जाते हैं। एक- एक बोल जैसे-जैसे सुनते जा रहे हैं, वैसे-वैसे बनते जा रहे हैं। लास्ट स्टेज वालों का लक्ष्य और बोल, स्वरूप द्वारा स्पष्ट दिखाई देगा। जैसे पहला पाठ आत्मा का सुनते हो और सुनाते हो। लास्ट स्टेज वाली आत्मा सिर्फ शब्द सुनेंगी, सुनावेंगी नहीं। लेकिन साथ-साथ स्वरूप में स्थित होगी। इसको कहते हैं बाप समान बनना। स्वयं का वा बाप का स्वरूप व गुण वा कर्त्तव्य, सिर्फ सुनायेंगे नहीं लेकिन हर गुण और कर्त्तव्य अपने स्वरूप द्वारा अनुभव करायेंगे। जैसे बाप अनुभवी मूर्त्त है, सिर्फ सुनाने वाले नहीं हैं। तो ऐसे फॉलो फादर करना है। जैसे साकार में बाप को देखा, सुनाने के साथ कर्म में, स्वरूप में करके दिखाया। सुनना, सुनाना और स्वरूप बन दिखाना - तीनों ही साथसाथ चला। ऐसे सुनना और सुनाना और दिखाना साथ-साथ है? अभी तक जितना सुना है उतना ही समाया है। विश्व के आगे कर दिखलाया है! महान् अन्तर है वा थोड़ा सा अन्तर है? रिजल्ट क्या है? सुनना और सुनाना तो कामन (Common;साधारण) बात है। ब्राह्मणों की अलौकिकता कहाँ तक दिखाई देती है? जैसे बाप के महावाक्य हैं कि 'मेरा जन्म और कर्म प्राकृत मनुष्यों सदृश्य नहीं, लेकिन दिव्य और अलौकिक है।' बाप-दादा के साथ-साथ आप ब्राह्मणों का जन्म भी साधारण नहीं, दिव्य और अलौकिक है। जैसा जन्म, जैसा दिव्य नाम वैसा ही दिव्य अलौकिक काम है।

जैसे हरेक लौकिक कुल की मर्यादा की भी लकीर होती है। ऐसे ब्राह्मण कुल की मर्यादाओं की लकीर के अन्दर रहते है? मर्यादाओं की लकीर, संकल्प में भी किसी आकर्षण वश उल्लंघन तो नहीं करते हैं। अर्थात् लकीर से बाहर तो नहीं जाते हैं। शूद्रपन के स्वभाव वा संस्कार की स्मृति आना अर्थात् अछूत बनना। अर्थात् ब्राह्मण परिवार से अपने आप ही अपने को किनारे करना। तो यह चैक करो कि सारे दिन में बाप का सहारा कितना समाय रहता और अपने आप किनारा कितना समय किया? बारबार किनारा करने वाले बाप के सहारे का अनुभव, बाप के साथ-साथ रहने का अनुभव, बाप द्वारा प्राप्त हुए सर्व खज़ानों का अनुभव, चाहते हुए भी नहीं कर पाते हैं। सागर के किनारे पर रहते सिर्फ देखते ही रह जाते हैं, पा नहीं सकते। पाना है, यह इच्छा बनी रहती है लेकिन 'पा लिया है', यह अनुभव नहीं कर पाते हैं। जिज्ञासा ही रह जाते हैं। 'अधिकारी' नहीं बन पाते हैं। तो सारे दिन में 'जिज्ञासु' की स्टेज कितना समय रहती है और 'अधिकारी' की स्टेज कितना समय रहती है? आप लोग के पास भी जब कोई नया आता है तो उसको पहले 'जिज्ञासु' बनाते हो। जिज्ञासु अर्थात् जिज्ञासा रहे कि पाना है। आप लोग भी 'जिज्ञासु' को किनारे रखते हो। संगठन में या रैगुलर क्लास में आने नहीं देते हो। जब वह कहता है कि अब अनुभव हुआ, निश्चय हुआ वा मान लिया, जान लिया, तब संगठन में आने की परमीशन (Permission;अनुमति) देते हो। तो अपने आप से पूछो कि जब जिज्ञासु की स्टेज रहती है तो बाप का सहारा वा कुल का सहारा अर्थात् संगठन का सहारा स्वत: ही समीप के बजाए, अपने को दूर-दूर वाला अनुभव नहीं करते? सहारे के बजाये स्वत: बुद्धि द्वारा किनारा नहीं हो जाता? बच्चे के बजाय मांगने वाले भक्त नहीं बन जाते? शक्ति दो, मदद करो, माया को भगाओ, युक्ति दो, माया से छुड़ाओ, यह 'ब्राह्मणपन' के संस्कार नहीं हैं। ब्राह्मण कब पुकारते नहीं। ब्राह्मणों को स्वयं बाप भिन्न-भिन्न 'श्रेष्ठ टाईटल' से पुकारते हैं। जानते हो ना? आपके कितने टाईटल हैं? ब्राह्मण अर्थात् पुकारना बन्द। ब्राह्मण अर्थात् सिरताज। कभी भी प्रकृति के वा माया के मोहताज नहीं। तो ऐसे सिरताज बने हो? माया आ जाती है अर्थात् मोहताज बनना। पुराने संस्कार वश हो जाते हैं, स्वभाव वश हो जाते हैं, यह है मोहताज पन। ऐसा मोहताज बाप के सिरताज नहीं बन सकता। विश्व के राज्य के ताजधारी नहीं बन सकता, बाप के सिरताज बनने वाले स्वप्न में भी मोहताज नहीं बन सकते। समझा, रियलाइज करो। अब सेल्फ रियलाईजशन कोर्स (Self-Realization Course) चल रहा है ना। अच्छा।

सदा अपने ब्राह्मण कुल की मर्यादा के लकीर के अन्दर रहने वाले 'मर्यादा पुरूषोत्तम', सुनने, सुनाने और समान बनने वाले, अभी-अभी स्वरूप से दिखाने वाले, सदा सिरताज, सदा बाप के सर्व प्राप्तियों के सहारे में रहने वाले श्रेष्ठ आत्माओं को बाप-दादा का याद-प्यार और नमस्ते।

दीदी जी से

जाना और आना कहेंगे? जाना और आना तब कहें जब साथ छोड़ कर जाता? कहाँ से भी जाना होता है, जाना अर्थात् कुछ छोड़ कर जाना। लेकिन यहाँ जाना और आना शब्द कह सकते हैं? यहाँ हैं तो भी साथ हैं, वहाँ हैं तो साथ हैं। जो सदा साथ रहता, स्थान में भी और स्थिति में भी, तो उसके लिए जाना नहीं कहेंगे। जैसे मधुबन में भी एक कमरे से दूसरे कमरे में जाओ तो यह नहीं कहेंगे हम जा रहे हैं, छुट्टी लेवें, नहीं। नैचुरल जाना आना चलता रहता है, क्योंकि साथ-साथ है ना। यह भी एक कमरे से दूसरे कमरे में चक्कर लगाते हैं। हैं मधुबन वासी। इसलिए विदाई शब्द भी नहीं कहते। सदा सेवा की बधाई देते हैं। सदा साथ रहते, सदा साथ चलते, अंग-संग हैं। ऐसे ही अनुभव होता है ना? महारथी अर्थात् बाप समान। महारथियों के हर कदम में पद्मों की कमाई तो कामन बात है, लेकिन हर कदम में अनेक आत्माओं को पद्मापति बनाने का वरदान भरा हुआ है। महारथी कहेंगे हम जाते हैं? नहीं, लेकिन साथ जाते हैं। महारथियों की सर्विस, नैनों द्वारा बाप से प्राप्त हुए वरदान अनेकों को

प्राप्ति कराना अर्थात् अपने द्वारा बाप को प्रत्यक्ष करना है। आप को देखते-देखते बाप की स्मृति स्वत: आ जाए। हरेक के दिल से निकले कि कमाल है बनाने वाले की! तो बाप प्रत्यक्ष हो जाएगा। बाप, आप द्वारा प्रत्यक्ष दिखाई देगा और आप गुप्त हो, जायेंगे। अभी आप प्रत्यक्ष हो, बाप गुप्त है, फिर हरेक दिल से बाप की प्रत्यक्षता के गुणगान् करते हुए सुनेंगे। आप दिखाई नहीं देंगे, लेकिन जहाँ भी देखेंगे तो बाप दिखाई देगा। इसी कारण जहाँ भी देखें वहाँ बाप ही बाप है। यह संस्कार लास्ट में समा जाते हैं जो फिर भक्ति में जहाँ देखते वहाँ 'तू ही तू' कह पुकारते हैं। लास्ट में आप सबके चेहरे दर्पण का कार्य करेंगे। जैसे आजकल मन्दिरों में ऐसे दर्पण रखते हैं जिसमें एक ही सूरत अनेक रूपों में दिखाई देती है। ऐसे आप सबके चेहरे चारों ओर बाप को प्रत्यक्ष दिखाने के निमित्त बनेंगे। और भक्त कहेंगे जहाँ देखते तू ही तू। सारे कल्प के संस्कार तो यहाँ ही भरते हैं। तो भक्त इसी संस्कार से मुक्ति को प्राप्त करेंगे। इसलिए द्वापर की आत्माओं में या मुक्ति पाने का संस्कार या तू ही तू के संस्कार ज्यादा इमर्ज रहते हैं तो अपने वा बाप के भक्त भी अभी ही निश्चित होते हैं। राजधानी भी अभी बनती तो भक्त भी अभी बनते। तो भक्तों को जगाने जाती हो वा बच्चों से मिलने के लिए जाती हो? चैक करना कि इस चक्कर में मेरे भक्त कितने बने और बाप के बच्चे कितने बने। दोनों का विशेष पार्ट है। भक्तों का भी आधा कल्प का पार्ट है और बच्चों का भी आधा कल्प का अधिकार है। भक्त भी अभी दिखाई देंगे या अन्त में? जो नौधा भक्ति करने वाले नम्बरवन 'भक्त माला' के मणके होंगे, वह भी प्रत्यक्ष यहाँ ही होने हैं। विजय माला भी और भक्त माला भी। क्योंकि संस्कार भरने का समय 'संगमयुग' ही है। भक्त अन्त में पुकारते रह जायेंगे, हे भगवान, हमें भी कुछ दे दो। यह संस्कार भी यहाँ से भरेंगे और बच्चे साथ का अनुभव करेंगे। अच्छा।